Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 4 | ISSN : 2581- 6306

स्कन्दपुराणकालिक शिक्षा व्यवस्था

डॉ0 वन्दना सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
प्रताप बहादुर स्नातकोत्तर महाविद्यालयत्र
प्रतापगढ़ सिटी, प्रतापगढ़ उत्तर प्रदेश।

Article Info
Volume 4, Issue 4
Page Number : 35-41
Publication Issue :
July-August-2021
Article History
Accepted : 03 Aug 2021
Published : 10 Aug 2021

सारांश– शिक्षा विषय जो पौराणिक उद्धरण उपलब्ध होते हैं, उनमें विद्यार्थी जीवन का स्वरूपांकन, आचार्य और शिष्य का सम्बन्ध, विद्यार्थी जीवन की महत्ता तथा आचार्य की स्थिति के गौरव पर अधिक बल दिया गया है।

मुख्य शब्द – शिक्षा, पौराणिक, विद्यार्थी, शिष्य, स्कन्दपुराणकालिक, समाज, संस्कार।

किसी भी समाज की धुरी वहाँ की शिक्षा होती है, शिक्षा व्यवस्था पर ही सम्पूर्ण राष्ट्र की दशा और दिशा निर्भर करती है। यदि किसी राष्ट्र का कायाकल्प बदलना है तो वहाँ की शिक्षा व्यवस्था को बदलना होगा। शिक्षा किसी भी समाज में सदैव चलने वाली सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास उसके ज्ञान एवं कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है; इस प्रकार उसे सुसंस्कृत, सभ्य एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। समाज में व्यक्ति नित–नये अनुभव प्राप्त करता है जिससे उसका व्यवहार दिन–प्रतिदिन प्रभावित होता है। उसका यह सीखना–सिखाना विभिन्न समूहों टेलीविजन, रेडियो, पत्र–पत्रिकाओं, उत्सवों आदि के माध्यम से होता है। अतः किसी भी समाज को समझने के लिये वहाँ की शिक्षा व्यवस्था को समझना अति आवश्यक हो जाता है। 18 पुराणों से सबसे विशाल स्कन्दपुराण की शिक्षा व्यवस्था को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझेंगे–

विद्या प्रारम्भ करने का समय–शिक्षा उपनयन संस्कार के पश्चात् ग्रहण की जाती थी। स्कन्दपुराण का कथन है कि उपनयन संस्कार से संस्कृत होने के उपरान्त विद्या अध्ययनार्थ गुरुगृह का आश्रय लेना चाहिए। भरद्वाज पुत्र दमन का उपनयन संस्कार हो जाने के पश्चात् विद्यारम्भ संस्कार किया गया।[1] गौतम और मनु प्रभृति शास्त्रकारों की मान्यता है कि ब्राह्मण बालक का उपनयन आठवें वर्ष में, क्षत्रिय बालक का ग्यारहवें वर्ष में तथा वैश्य बालक का बारहवें वर्ष में होना चाहिए।[2]

स्कन्दपुराण में विश्वानर ने अपने पुत्र गृहपति का पाँचवे वर्ष में यज्ञोपवीत संस्कार किया।[3] सगर के साठ हजार पुत्रों का भी विद्या ग्रहण हेतु यज्ञोपवीत संस्कार किया गया था।[4] साथ ही वशिष्ठ[5] और विश्वामित्र[6] के

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

भी यज्ञोपवीत संस्कार किये गये थे। ऐसी स्थिति में यही प्रतीत होता है कि तात्कालिक व्यवस्था में विद्यारम्भ का समय बाल्यकाल ही मान्य था। स्मृतियों में स्थल–स्थल पर प्रस्तुत प्रसंग पर बल दिया गया है।[7]

शिक्षा केन्द्र–स्कन्दपुराण में विश्वानर नामक ब्राह्मण ने वेदारम्भ संस्कार के पश्चात् अपने पुत्र गृहपति को सांगोपांग वेदों का अध्ययन कराया था।[8] इस उद्धरण से व्यक्त होता है कि शिक्षित परिवार में बालक को स्वगृह मे भी प्रशिक्षित किया जाता था। इसका समर्थन वैदिक उद्धरणों से किया जा सकता है उपनिषद् में निरूपित है कि आरुणि ने अपने पुत्र को दर्शन के गूढ़ तत्वों से परिचित कराया था।[9] शिक्षा के साधनभूत जिन केन्द्रों का उल्लेख स्कन्दपुराण में हुआ है, उनका विवरण अनुगामी अनुच्छेदों में प्रस्तावित है।

गुरुकुल– प्राचीन काल में शिक्षा गुरुकुलों में दी जाती थी। गुरुकुलों की स्थापना प्रायः वनों, उपवनों तथा ग्रामों या नगरों में की जाती थी। वनों में गुरुकुल बहुत कम होते थे। अधिकतर दार्शनिक आचार्य निर्जन वनों में निवास, अध्ययन तथा चिन्तन पसन्द करते थे। इनके यहाँ दर्शन शास्त्रों के साथ–साथ व्याकरण, ज्योतिष तथा नागरिकशास्त्र भी पढ़ाये जाते थे। अधिकांश गुरुकुल गाँवों या नगरों के समीप किसी बाग अथवा वाटिका में बनाये जाते थे। जिससे उन्हें एकान्त एवं पवित्र वातावरण प्राप्त हो सके इसके दो लाभ थे; एक तो गृहस्थ आचार्यों को सामग्री एकत्रित करने में सुविधा थी, दूसरे ब्रह्मचारियों को शिक्षाटन में अधिक अटन नहीं करना पड़ता था।

स्कन्दपुराण में गुरुकुल में भी शिक्षा दी जाती थी क्योंकि विश्वकर्मेश्वर की कथा में प्रजापति के पुत्र और ब्रह्मा के दूसरे शरीर एवं सत्कर्मों में अतिनिपुण विश्वकर्मा यज्ञोपवीत हो जाने पर बाल्यकाल में केवल भिक्षा के द्वारा भोजन करके गुरुकुल में टिककर गुरु की सेवा कर शिक्षा प्राप्त कर रहे थे।[10] गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करने वालों का सर्वत्र आदर सम्मान होता था। क्योंकि मत्स्यपुराण में विहित है कि गुरुकुल में शिक्षा समाप्त कर लौटने वाले ब्राह्मणों का आदर करना राजा का कर्त्तव्य है।[11]

ऋषि आश्रम– तत्कालीन समय में ऋषि आश्रम में भी विद्या अर्जित की जाती थी। पिप्पलाद, विदुर, अगस्त्य, च्यवन, आरुणि आदि ऋषियों ने अपने आश्रम में आये हुए ज्ञानार्थियों को अपनी सिद्धि विद्या द्वारा सन्तुष्ट किया था।

तीर्थस्थान– पौराणिक आख्यानों में तीर्थस्थानों का बड़ा ही महत्व था। ज्यादातर लोग अपने समस्त समारोहों या विशेष असवरों पर तीर्थस्थान भ्रमणार्थ, ईशदर्शनार्थ तथा ज्ञानार्थ हेतु जाया करते थे। तीर्थस्थानों में विद्वानों का समूह रहता था और वो ईश्वर की आराधना से ज्ञान अर्जित कर अपने ज्ञान रूपी प्रकाश से सब को प्रकाशित करते थे। सूत ने नैमिषारण्य तीर्थ में समस्त ऋषियों को अट्ठारह पुराणों का वाचन किया था।[12]

विद्वन्मण्डली– स्कन्दपुराण के प्रभास खण्ड में ब्रह्मा के आदेश से सरस्वती और्व द्वारा प्रज्ज्वलित अग्नि शमन हेतु हिमालयस्थ पिप्पलाद ऋषि के आश्रम पहुँची; यहाँ से आगे बहते–बहते वे नीचे उतरी तथा एक वृक्ष के नीचे पहुँची। इस वृक्ष कोटर की कुटिया में करोड़ों मुनिगण निवास करते थे। वहाँ देवपाठी ब्राह्मणों सा सुस्वर में की गयी वेदध्वनि सुनाई पड़ी। इससे परिलक्षित होता है कि यह विद्वानों की मण्डली अध्ययन तथा अध्यापन

हेतु एकत्रित होकर इस दिशा में गति कर रहे थे।[13] वायु और ब्रह्माण्ड पुराणों में वर्णित है कि महर्षि अंगिरा ने संशयात्मक बातों के निर्णयार्थ एक बार ऋषियों की सभा आयोजित किया था।[14] यह स्मरणीय है कि स्कन्दपुराण में उपर्युक्त साधनों के अतिरिक्त शिक्षा–सम्बन्धी व्यवस्थित विद्यालय का उल्लेख नहीं मिलता है। जिन साधनों के सन्दर्भ इन ग्रन्थों में मिलते हैं; उनका समर्थन अन्य साक्ष्यों द्वारा भी किया जा सकता है।

उदाहरणार्थ, कादम्बरी में बाण के पूर्वज कुबेर नामक आचार्य का उल्लेख मिलता है तथा यह वर्णित है कि कुबेर के घर ब्रह्मचारी बड़ी सावधानी से वेदाध्ययन करते थे।[15] इसी प्रकार शाकुन्तलम् में कुलपति कण्व के आश्रम का वर्णन मिलता है।[16] तीर्थ भी विद्या वितरण के साधन थे। महाभारत में विद्या–लाभ तीर्थ यात्रा का फल माना गया है।[17]

शिक्षाविधि– तत्कालीन समाज में प्रवचन, शास्त्रार्थ तथा स्वाध्याय विधि, द्वारा शिक्षा अर्जित की जाती थी किन्तु प्रवचन सर्वाधिक प्रचलित था। स्कन्दपुराण में प्रवचन शैली द्वारा शिक्षा ग्रहण करने का उदाहरण प्राप्त होता है। नैमिषारण्य में महर्षिगणों द्वारा यज्ञ का सत्रावसान होने पर पूत चरित्र सूत लोमहर्षण से पुण्यमयी पुराणसंहिता पूछने पर पौराणिक–प्रवर सूत ने मस्तक नत करके सरस्वतीनन्दन व्यास को प्रणाम करते हुए पुराण का प्रवचन किया।[18]

यदि स्कन्दपुराण के इतिहास की बात करें तो कैलास शिखर पर ब्रह्मादि के समक्ष शिवजी ने पार्वती को 'स्कन्दपुराण' का प्रवचन किया था, पार्वती ने षडानन कार्तिकेय को और कार्तिकेय ने नन्दी को तथा नन्दी ने अत्रिकुमार को, अत्रिकुमार ने व्यास को, और व्यास ने लोमश ऋषि को और उन्होंने ऋषियों के समक्ष स्कन्दपुराण का प्रवचन किया था।[19] स्कन्दपुराण के वर्णन से विदित होता है कि पुराण के प्रवक्ता वर्ण्य शैली को ग्राह्य बनाने की चेष्टा करते थे जिस समय ऋषिगण पौराणिक आख्यान को सुन रहे थे, उन्हें अमृत पीने के समान सुख मिल रहा था। इसमें सन्देह नहीं कि प्रवचन और श्रवण शिक्षा–शैली का प्रमुख स्वरूप था। यह परम्परा वैदिक काल में ही प्रतिष्ठित हो चुकी थी। प्रवचन तथा श्रवण–विधि का वैदिक वाङ्मय के प्रवाह में महान् योगदान था।

छात्रों के कर्त्तव्य– स्कन्दपुराण में विवेचित है कि ब्रह्मचारियों का एकमात्र गुरुसेवा ही धर्म है। गुरु की शुश्रूषा ही शिष्य का अनिवार्य कर्त्तव्य माना गया है। जो मूर्ख गुरु, गुरुपत्नियों, गुरुसन्तान की बात स्वीकार करके फिर उसे नहीं करता; वह अश्वय ही नरकभागी होता है।[20] वैदिक काल में जो छात्रोचित कर्त्तव्य बताये गये हैं वही पुराणकाल में भी यथावत् रहे। छात्रों के लिए कठोर दिनचर्या निर्दिष्ट की गयी है–प्रतिदिन समिधा जुटाने के बाद स्नान करना, अग्नि संचार करके आचमन, संध्योपासना करना, तर्पण करना, गुरु के पास–पड़ोस से भिक्षा लाना, गुरु के अधीन वेदाध्ययन करना, गुरु के जलपात्रों में पानी भरना, कुश, पुष्प, मिट्टी, गोबर आदि जुटाना। भू शयन कर प्राप्त भिक्षा में से गुरु के आदेश पर ही अपने लिए भोजन का अंश ग्रहण करना, मधु को ग्रहण न करना, आमिष भोजन करना, भोजन का अंश जूठा नहीं छोड़ना, भोजन–पात्र स्वयं माँजना धोना, दिन में नहीं सोना, जूता नहीं पहनना, शरीर में तेल नहीं लगाना, गरम जल से नहीं नहाना, इत्र, फूलमालाएँ, गजरे आदि

काम में नहीं लेना, सिर के बाल या तो मुड़ाए रखना या जटा के रूप में बढ़ाए रखना, नित्य गायत्री मंत्र का जाप करना, शिष्टाचार के नाते गुरु को अभिवादन करते समय उठकर पैर छूना, उनकी निन्दा, नकल मजाक नहीं करना। गुरुपत्नी का भी गुरुसदृश आदर करना आदि सभी छात्रों के कर्त्तव्य थे।

उपर्युक्त विधि निषेधात्मक नियमों का एकमात्र उद्देश्य अन्तेवासी ब्रह्मचारी में धर्मपालन, अनुशासन एवं संयम के आदर्शों को इतनी मजबूती के साथ स्थापित कर देना था कि आगे चलकर गृहस्थाश्रम में वह सच्चा धर्मनिष्ठ नागरिक बन सके।[21] गुरु से वेद का ज्ञान प्राप्त करके स्वाध्याय करना तथा गुरु की आज्ञानुसार गुरुदक्षिणा देना ब्रह्मचारी का कर्त्तव्य है। यही ब्रह्मचर्य की पूर्णता है। स्कन्दपुराण में विश्वानर के पुत्र गृहपति ने नियमानुसार छात्रधर्म का पालन किया था।[22]

गुरु–शिष्य के सम्बन्ध को विश्वकर्मेश्वर की कथा से भली–भाँति समझा जा सकता है जिका सार इस प्रकार है–त्वष्टा नामक प्रजापति के पुत्र और ब्रह्मा के दूसरे शरीर एवं सब कर्मों में अतिनिपुण विश्वकर्मा हुये थे वे यज्ञोपवीत हो जाने पर बाल्यावस्था में ही भिक्षा के द्वारा भोजन करके गुरुकुल में टिककर गुरु की सेवा करने लगे। एकबार वर्षाकाल उपस्थित होने पर उनके गुरु ने आज्ञा दी कि बेटा तुम मेरे लिए एक ऐसी पर्णकुटी बना दो जिससे मुझे वर्षाकाल में क्लेश न होने पाये। फिर गुरुपत्नी ने भी कहा हे त्वष्टृनन्दन! मेरे लिए एक चोलिया बना दो। पर वह बड़ी अथवा ढ़ीली न होने पावे और ऐसा प्रयत्न करो, जिसमें वह बिना कपड़ा के होने पर भी सुन्दर हो और वल्कल का ही बने पर सदैव उज्ज्वल रहे। इसी तरह गुरुपुत्र पादुका तथा गुरुपुत्री ने एक जोड़ा सोने के कर्णफूल बनाने को कहा।

तत्पश्चात् विश्वकर्मा ने विचार किया क्या करूँ, कहाँ जाऊँ? इस वन में मुझे कौन बुद्वि की सहायता देगा, किसकी शरणागत होऊँ? क्योंकि जो गुरु, गुरुपत्नी, गुरुसन्तान की बात स्वीकार करके फिर उसे नहीं करता, वह अवश्य ही नरकभागी होता है। क्योंकि ब्रह्मचारियों का एकमात्र गुरुसेवा ही धर्म है गुरु की बात पूरी किये बिना मेरा निस्तार कैसे हो सकता है? गुरु लोगों की आज्ञा–पालन करने से ही समस्त मनोरथ सिद्ध होते हैं, अन्यथा नहीं हो सकते। अतएव उनका वचन अवश्य ही पूरा करना चाहिए। तत्पश्चात् तपस्वी के निर्देशानुसार विश्वकर्मा ने शिव की आराधना कर गुरु के आदेश का पालन किया।[23]

इस तरह तात्कालिक समाज में गुरु और शिष्य के सम्बन्ध अतिमधुर थे। शिष्य का गुरु के प्रति अपार श्रद्धा रहती थी और यह श्रद्धा की भावना गृहस्थाश्रम में प्रवेश के उपरान्त भी बनी रहती थी।

अध्ययन के विषय

वेद–छात्रों को वेदों का ज्ञान कराया जाता था। वेदों की महत्ता को प्रकाश में लाते हुए वायु और ब्रह्माण्ड पुराणों में वर्णित है कि वेद ही मनुष्यों के संवरण हैं तथा वेद का परित्याग करने वाले नग्न हैं।[24] विष्णु पुराण के अनुसार ऋक्, यजुः और साम के परित्यागी नग्न और पातकी हैं।[25] ब्रह्माण्ड पुराण में वेद–राशि को सभी विद्याओं की अपेक्षा उत्कृष्ट बताया गया है।[26] वायुपुराण में गया तीर्थ के विषय में वर्णित है कि इस क्षेत्र में सभी वस्तुओं का परित्याग किया जा सकता है, किन्तु वेद का नहीं।[27] इस प्रकार स्कन्दपुराण में भी वेद की महत्ता को

प्रतिपादित करते हुए कहा गया है कि अठारह प्रकार की विद्याओं में मीमांसा सबसे बड़ी है, उससे भी तर्कशास्त्र श्रेष्ठ है, तर्कशास्त्र से भी पुराण गुरुतर हैं। धर्मशास्त्र पुराणों में भी श्रेष्ठ है और धर्मशास्त्रों से वेद परम श्रेष्ठ हैं, वेदों में भी उपरिषद् श्रेष्ठ और गायत्री उन उपनिष्दों में भी अधिक श्रेष्ठ है।[28]

पुराण श्रवण एवं लेखन

छात्रों को पुराणों की शिक्षा विधिवत् दी जाती थी पुराणों का श्रवण एवं पुराणोक्त कथा का स्वतः पाठ किया जाता था पुराण श्रवण का उदाहरण स्कन्दपुराण के अनेक स्थलों पर प्राप्त होता है।

अष्टादश पुराणों, उपपुराणों के वर्णन के पश्चात् लोमहर्षण ऋषि कहते हैं कि जो व्यक्ति दैव–पितृ कार्यों में पुराणवृत्तान्त का क्रमानुरूप पाठ करता है, उसे हरिलोक की प्राप्ति होती है। यह पुराण विवरण पवित्र, यशप्रद, पितृगण को प्रसन्नता देने वाला है। यह देवताओं के लिए अमृत के समान तृप्ति देने वाला है। यह मनुष्यों के महापातकों क नाशक है।[29] और भी उसके प्रत्येक आख्यान सुनने के अलग–अलग लाभ बताये गये हैं। शिव सहस्त्र नाम आख्यान में कथित है कि शंकर का यह सहस्त्र नाम जो पढ़ता है उसकी दरिद्रता छह मास के भीतर शीघ्र नष्ट हो जाती है जिसके घर में परमात्मा का यह स्तोत्र लिखित रहता है वहाँ पार्वती सहित शिव नित्य विद्यमान रहते हैं। इसके पाठ से सिंह, चोर और ग्रह से ग्रस्त मनुष्य मुक्त हो जाता है। इसका पाठ करने वाले सभी रोगों से मुक्त होकर परम सुख प्राप्त करता है। जो प्रातः काल उठकर स्तोत्र का भक्तिपूर्वक पाठ करता है वह शिव के वचनानुसार सभी आपत्तियों से मुक्त और धनधान्य से युक्त होता है।[30]

बदरीश क्षेत्र माहात्म्य वर्णन में उल्लिखित है कि यह क्षेत्र पुण्य, यश, आयु, पुत्र तथा धनधान्य देने वाला है। बदरीनाथ का माहात्म्य सभी पापों को छुड़ाने वाला है। इसे सुनकर भी मनुष्य विष्णु सायुज्य मोक्ष को प्राप्त करता है। उसके सभी मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं यह माहात्म्य जिस घर में लिखित रहता है, उसमें आधि, व्याधि, भयंकर राजा और अग्नि का भय नहीं होता। जिस घर में यह पुस्तक रहती है, वहाँ नित्य विष्णु का सानिध्य रहता है। यह सब माहात्म्य जो नियम से सुनता है, उसकी सभी कामना पूर्ण होती है।[31]

स्कन्दपुराण के अतिरिक्त अन्य पुराणों में भी पुराण श्रवण तथा पाठ का जिक्र मिलता है–

मत्स्यपुराण के अनुसार सन्ध्योपासना के अनन्तर स्कन्द की कथा पढ़ने से मनुष्य चिरायु और लक्ष्मीवान् होता है।[32] वायु पुराण में वर्णित है कि महादेव की पुरी में विविध प्रकार की शुभ निरन्तर चलती रहती हैं।[33]

धर्मशास्त्र– धर्मशास्त्र के अध्ययन के विषय में सुस्पष्ट स्थल तो नहीं मिलते पर इनकी महत्ता स्कन्दपुराण के उद्धरणों से प्रतिपादित की जा सकती है। अठारहों विद्याओं में मीमांसा सबसे बड़ी है, उससे भी तर्कशास्त्र श्रेष्ठ, तर्कशास्त्र से भी पुराण गुरुतर हैं, धर्मशास्त्र पुराणों से भी श्रेष्ण हैं और धर्मशास्त्रों से वेद परम श्रेष्ठ हैं।[34] अन्यत्र भी वर्णन है कि श्राद्ध के अवसर पर विद्वानों को धर्मशास्त्र प्रदान करने पर पितर सन्तुष्ट रहते हैं। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाज में धर्मशास्त्र प्रचलित महत्वपूर्ण अध्ययन का विषय रहा होगा।

उपर्युक्त विवेचनों से यह स्पष्ट है कि शिक्षा विषय जो पौराणिक उद्धरण उपलब्ध होते हैं, उनमें विद्यार्थी जीवन का स्वरूपांकन, आचार्य और शिष्य का सम्बन्ध, विद्यार्थी जीवन की महत्ता तथा आचार्य की स्थिति के गौरव पर अधिक बल दिया गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड तृतीय भाग 74.2
2. गौतम धर्मसूत्र 1.6.12
3. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड प्रथम भाग 11.41
4. स्कन्दपुराण, केदारखण्ड 27.2
5. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड चतुर्थ भाग 76.13
6. वहीं 86.3
7. ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्य विप्रस्य पंचमें राज्ञों बलार्थिनःषष्ठे वैश्यस्यार्थिनोऽष्टमें। मनुस्मृति, 2/27, राजबली पाण्डेय हिन्दू संस्कार, पु0 154
8. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड प्रथम भाग 11.42.43
9. छान्दोग्य उपनिषद् 1/11/4
10. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड चतुर्थ भाग 86.3.4
11. मत्स्यपुराण 215/58
12. स्कन्दपुराण, प्रभासखण्ड प्रथम अध्याय
13. स्कन्दपुराण, प्रभासखण्ड 36.23
14. वायुपुराण 83/115 ब्रह्माण्ड पुराण 3/20/19
15. जगुर्गृहेऽभ्यस्तसमस्त वाङ्मयैः संसारिकैः पंजरवर्तिभिः शुकैः।।
    निगृह्यमाणा वटवः पदे पदे यूजंषि सामानि च यस्य शंकिताः।। कादम्बरी, पूर्व, भाग।
16. अभिज्ञानशाकुन्तलम प्रथम अंक
17. विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते।। वनपर्व 82/9
18. स्कन्दपुराण, प्रभासखण्ड 1.3
19. स्कन्दपुराण, प्रभासखण्ड 1.27–29
20. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड चतुर्थ भाग 86.20
21. हिन्दू–धर्म का गौरवग्रन्थ–कृष्ण बल्लभ द्विवेदी पृ 243
22. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड प्रथम भाग–एकादश अध्याय
23. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड चतुर्थ भाग 86.3–100
24. सर्वेषामेव भूतानां त्रयी संवरणं स्मृतम।

परित्यजति यो मोहात्ते वै नग्नादयो जनाः।। वायुपुराण, 78.27, ब्रह्माण्डपुराण, 3/14/35

25. ऋग्यजुस्सामज्ञेयं त्रयीवर्णावृतिर्द्विज।
एतामुज्झति यो मोहात्स नग्नः पातकी द्विजः।।विष्णपुराण 2/17/5
26. सर्वेभ्योऽपि शब्देभ्यो वेदराशिर्महामुने।। ब्रह्माण्डपुराण, 4/38/3
27. सन्यसेत्सर्वकर्माणि वेदमेकं न सन्यसेत्।। वायुपुराण 105/28
28. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड प्रथम भाग 9.49–50
29. स्कन्दपुराण, प्रभास खण्ड 3.110
30. स्कन्दपुराण, केदार खण्ड 64.138–147
31. स्कन्दपुराण, केदारखण्ड 62.78–83
32. संध्यामुपास्य यः पूर्वा स्कन्दस्य चरितं पठेत्। मत्स्यपुराण 7/14
33. कथाश्च विविधाः शुभाः। वायुपुराण 101/305
34. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड प्रथम भाग 9.49–50